गिरते पत्तों का आकर्षण

सुखिन्दर कालरा

क्षितिज की खोज

"क्षितिज तक क्या जाना है
क्षितिज तो अपने अन्दर है।"

क्षितिज तो अपने अन्दर है
जब चाहे पैदा करलो
क्षितिज तो अपना-अपना है
जिस रूप में तुम चाहो पालो।

दो छोर हमारे पास हैं
इक अन्दर है इक बाहर है,

जब - अन्दर से जुड़ता बाहर है
बाहर ले जाता अन्दर है,

तो समझो वह क्षितिज ही है
तो समझो वह क्षितिज ही है।

भोर का तारा यूँ लग रहा था
जैसे वृक्ष के पीछे से धरती आकाश
को मिला रहा हो - क्षितिज बन गया हो।

कच्चे घरों पे बरखा

हर घर की माटी
उधड़ने लगी थी
ईंट-दर-ईंट तब
गिरने लगी थी
कुछ अधमरे लोग
गिरती दीवारों के नीचे
आए,
चीखे,
मर गये --
उन घरों के मलबों के संग
उनके शव भी पड़े थे
पर उन्हें उठाने की
जल्दी किसे थी,
ज़रूरत किसे थी ?
जल्दी थी --
गिरी हुई ईंटें उठाने की,
लकड़ी उठाने की,
चीज़ें उठाने की ।
वो ईंटें लगनी थीं
कुछ और कच्चे घरों में
जो अगली बरसात में
शायद ढह जाएँगे
और
कुछ और लोग
लाशों में बदल जाएँगे।

वह चाँद

शिरीष के वृक्ष की
नाज़ुक सी टहनियों के
नन्हें-नन्हें पत्तों के
बीच की खिड़की से
चँदा यूँ झाँक रहा
जैसे -
सजी सँवरी दुल्हनिया
प्यारी सी चुनरी ओढ़े
सुन्दर से मुखड़े पर
लजीली सी मुस्कान लिए
आँखें खुकाये हुए
कुछ लजाए हुए
नाक में नथनी डाल
माथे पे बड़ा सा टीका
होठों पर लाली लिए
गालों को सुर्ख किए
कजरारी आँखों संग
कानों में झुमके डाल
सिमटी सी बैठी हो।
तभी -
वायु के झोंके से
पत्तों ने हिल कर के
चन्दा के मुखड़े को
कुछ यूँ ढाँप लिया

जैसे -
मेंहदी लगे हाथों की
नाजुक सी उँगलियों ने
दुल्हन के मुखड़े को
धीरे से ढाँपा हो।

पढ़ाई का तग़मा

पढ़-पढ़ कर
इक तग़मा पढ़ाई का
गले में लटका लिया
माथे पर चिपका लिया।
अब मैं केवल
वही तग़मा हूँ
वही नगमा हूँ
जो उम्र भर गुनगुनाऊँगा।
मैं बी.ए. हूँ,
मैं एम.ए. हूँ,
मैं एम.फिल. हूँ,
पी.एच.डी. हूँ।
इससे आगे पीछे
जो भी -
मुझको आता - वह तो,
सब बेकार

और -
इन तग़मों के बिना
जो भी हैं
सब मानव
लाचार
सब मानव
लाचार।

मेरे कमरे की खिड़की

आज अचानक देखा मैंने
टूट गया था शीशा थोड़ा
मेरे कमरे की खिड़की का।
पहले कुछ अफसोस हुआ
कुछ खीज चढ़ी
कुछ गुस्सा आया
फिर –
मन में थोड़ा रोश लिए
जा बैठी मैं अन्दर ही
ध्यान लगा था मेरा फिर भी
उस टूटे हुए शीशे पर ही
पता नहीं क्या
कुछ अच्छा सा महसूस हुआ था
देख उस टूटे हिस्से को
आसमान कुछ ज़्यादा नीला
धुला धुला सा लगता था
बड़े बड़े पेड़ों के
वो छोटे छोटे हिस्से
हरियाली के प्रतीक बने थे
छोटी छोटी शाखाएँ भी
झूम रही थीं
नये उगे पत्तों पे
मस्ती छाई हुई थी
इतने में नज़र आया

इक नन्हा पक्षी
पंख फैलाये उड़ रहा था
आकाश के उस
छोटे हिस्से में
मुझे लगा वो सब मेरा था
नन्हा सा आकाश का हिस्सा
पेड़ों की वो हरियाली भी
नये उगे पत्तों का यौवन
और पक्षी की आज़ादी भी,
जाने कहाँ गई झल्लाहट
मन की खीज और हुस्सा भी
जन्म लिया मन के आँगन में
प्यारी सी तरंगों ने
मीठी सी उमंगों ने
लगा मुझे जो मन का शीशा
टूट कहीं से जाये तो
छोटा सा नीला आकाश
कहीं अन्दर ही समाये तो
थोड़ी सी निर्मल वायु
कहीं मेरे हिस्से भी आये तो
तन का ढलना, मन के यौवन
पर कभी न छाये तो
मन पंछी आज़ादी की
दो साँसें ही ले पाये तो।
शायद इसी लिए
मुझे बेहद अच्छा
लगने लगा था
वो छोटा सा टूटा हिस्सा
मेरे कमरे की
खिड़की का।

गन्ध–सुगन्ध

शैशव
वह
जो
गन्ध और
सुगन्ध
का
एक
ऐसा मिश्रण
जिसमें
हर गन्ध भी
सुगन्ध बन
बिखर सी
जाती है

यौवन में
वही गन्ध
सुगन्ध सी
महसूस होती है
पर काश!
वह गन्ध की
परिधी पार
कर नहीं
पाती है।

वृद्धावस्था
वह विडम्बना है
जो जीवन भर की
सेंची हुई
गन्ध और
सुगन्ध
अपने में ही
समेटे
चली जाती है।

नारी की मुस्कान

मन्द-मन्द मुस्कान लिए
वो नार चली आती है,
जीवन का मीठा गान लिए
वो नार चली आती है।

छिपा है क्या मुस्कान में इसकी
मुझको बतला दो तुम,
गाया है क्या गान में इसने
कुछ तो समझा दो तुम।

ममता की मुस्कान है यह
या बहन का इसमें प्यार है क्या
पत्नी की श्रद्धा है यह
या चंचल मन की चाह है क्या।

गान यह शायद लोरी जैसा
या राखी के बन्धन सा,
या प्रियतम से प्रथम मिलन का
या इक प्यासे से दिल का।

नारी की मुस्कान में शायद
जन-जन की मुस्कान छिपी है,
नारी के ही गान में शायद
जीवन की झंकार छिपी है।

घेरों में बँधी औरत

कितने घुरों में
समाज के,
बँधी है यह औरत।

कहीं बिन्दिया का घेरा,
कहीं चूड़ियों की झंकार,
कहीं पाजेब के घुँघरु,
कहीं माँग का सिन्धूर,
कहीं मंगल-सूत्र का बन्धन,
कहीं घूँघट की घुटन।

शादी के चन्द फेरों के
घेरों में बधी है यह औरत।

जब साथ छूट जाता है,
ये सब टूट जाता है,
और रह जाती है यह औरत
सफेद धोती के घेरे में।

भीड़ का सूनापन

यह हजूम,
यह भीड़,
यह जमघट,
यह कोलइहल,
जैसे घास के तृण,
रेत के कण,
समुद्र की लहरें,
आकाँश के तारे से।

इ सब में
कई बार
कहने को
कोई एक भी न हो
जिसे अपना कह सकें।

ये भेड़ों के झुंड,
ये पेड़ों के झुरमट,
ये रेत के टीले,
ये उमड़ती हुई भीड़,
ये सब के सब
इतने क्यों, - पर कभी
इतने कम क्यों ?
अन्दर इतना भरा,
कभी इतना खाली क्यों ?

उम्मीद का चिराग

असहाए सा महसूस हो रहा
मुझको अपना आप
एक घुटन एक टूटन
एक बिखरन सी हो जैसे
अन्दर से कुछ जुड़ न पाये
जैसे टूट कर बिखर गया हो
काँच के टुकड़ों के मानिंद
जो कुछ वह अनसुना सा है
जो कहीं गहरा पैठ रहा
अन्दर ही
कैसे उस कुछ से लड़ पाऊँ
समझ नहीं पा रही हूँ मैं
कुचलूँ कैसे नाग फनी को
फैल रही जो मन आँगन में
उस कुछ का कोहरा
छट जाए यह मन करता है
चिराग कहीं उम्मीद का अन्दर
जल जाये यह मन करता है।
– सोच रही मैं अन्दर से
कोई ताकत चिराग जलाए
या फिर इस बुझे चिराग को
मुझको ही जलाना होगा

– चिराग उम्मीद के जलते ही
अन्दर सब रौशन हो जाता
और उस रौशन हुए अन्दर से
बाहर सब खिल जाता।

खिलखिला कर हँस न पाऊँ
तो लगता है कुछ गायब है
तन का बोझा मन को बोझिल कर जाये
तो लगता है कि कुछ गायब है।

कागज़ बिन कविता

कागज़ बिन कविता ऐसे
जैसे सागर की लहरें हों
या आँखों से गिरा अश्रु हो
या पत्तों की अठखेलियाँ
(या पत्तों का हिलना जुलना)

ढूंढ रही मैं यहाँ वहाँ
जहाँ तहाँ --
इक काग़ के टुकड़े को
रखना चाह रही सम्भाल कर
मन से उठते उद्गार को।

वो कागज़ का नन्हा टुकड़ा
मुचड़ा चुचड़ा सा गिरा हुआ
बेहद प्यारा सा लगा मुझे
लिख डाली कविता उस पर ही।

कागज़ छोटा था
मुचड़ा भी था
आधार बन गया
मेरी कविता का
सोच रही थी
न होता वो नन्हा टुकड़ा
तो उमड़ घुमड़ कर

रह जाते मेरे अन्दर के
चन्द आँसू
चन्द आहें भी।

संजोती कैसे
उन सपनों को।
बिखर ही जाते
आधार मिले बिन।

लगा मुझे कि
जीवन का आधार भी ऐसे
बन जाये कुछ
चाहे छोटा हो
मुचड़ा भी हो
भले कान्ति हीन हो।

पर आधार सभी का
कुछ न कुछ तो
किसी रूप में
किसी रंग में
मिल जाये या
हो जाये या
पा जाये।

माटी

माटी भी सोना हो जाये
सही हाथों में आ जाये तो।
सोना भी माटी हो जाये
ईमान डगमगा जाये तो।

माटी के गुण इतने हैं
कि ब्यान नहीं हो पाते हैं,
पर - इस माटी की खातिर ही
बेटे बैरी हो जाते हैं।

माटी से माटी उगती है,
माटी में माटी ढलती है,
माटी की दुश्मन माटी है,
माटी माटी से लड़ती है।

बचपन में माटी प्यारी है,
जवानी में अति सुन्दर है,
बुढ़ापे में वो ढलती है,
फिर माटी में जा मिलती है।

हर द्वार को माटी घड़ती है,
हर द्वार में माटी जाती है,
हर द्वार में माटी रहती है,
हर द्वार से माटी जाती है।

माटी खेले इस माटी से
सब माटी फिर हो जाता है,
माटी माटी का खेल है सब
माटी माटी हो जाता है।

माटी की हिम्मत माटी है,
माटी की फितरत माटी है,
माटी की चुनौती माटी है,
माटी की किस्मत माटी है।

माटी के अन्दर माटी है,
माटी के बाहर माटी है,
माटी के ऊपर माटी है,
माटी के नीचे माटी है।

माटी माटी पे चलती है,
माटी पे माटी चलती है,
माटी माटी को खलती है,
माटी को माटी छलती है।

माटी माटी से माँग भरे,
माटी माटी का लेप करे,
माटी का चूड़ा बाहों में भर,
माटी माटी संग प्यार करे।

भू गर्भ जब माटी उगले तो
तब ज्वाला वो बन जाती है,
चहूँ ओर बिखर के फिर से
वो माटी फिर बन जाती है।

माटी ही जोड़े माटी को,
माटी ही तोड़े माटी को,
माटी ही तरसे माटी को,
माटी ही मसले माटी को।

माटी की यह फितरत है
नित नये रूपों में ढलती है,
इस माटी को गूँध-गूँध
नित नये खिलौने घड़ती है।

अनगिनत खिलौने माटी के
हर रोज़ जगत में आते हैं,
चन्द रोज़ देख यहाँ का रूप
फिर माटी खुद हो जाते हैं।

माटी में थिरकन होती है,
माटी में धड़कन होती है,
माटी में हलचल होती है,
जीवन में पलपल होती है।

माटी नीचे भी सोना है,
माटी ऊपर भी सोना है,
सोना माटी को रुलाता है,
माटी सोने को रोती है।

माटी सर है, माटी गर्दन,
माटी उठती, माटी झुकती,
माटी ही माटी के आगे,
माटी बन कर है ढहती।

चन्द लाइनें

इस उपवन के बीचो बीच
इस फूल ने मुझको खींच लिया
लगा मुझे ऐसे जैसे हो
बिन्दिया किसी सुहागन की।

रौशनी करने को
दीया खुद जलाया था
पर लौ आँचल को पकड़ेगी
कभी ऐसा गुमाँ न था।

अन्धेरों से डर कर
मैंने दीये जलाये थे
पर मन के अंधियारे का डर
कौन दीया बुझायेगा ?

अन्दर का क्षितिज

क्षितिज तक क्या जाना है
क्षितिज तो अपने अन्दर है।

नारी - नारी में अन्तर

इक नारी -
फूलों से लदी,
गहनों से सजी,
बाहों में घिरी,
दुल्हन है बनी !

और इक -
बच्ची को उठाए,
नज़रों को झुकाए,
हाथों को बढ़ाए,
भिखारिन है बनी !

एक ख़्याल

पायल छनक उठी
पाओं में सज जाने से,
खुशबू महक उठी
फूल के खिल जाने से,
चिड़िया चहक उठी
बगिया में आ जाने से,
और कोयल कूक उठी
सावन के आ जाने से।

सागर तट की बस्ती में
कोई माँझी नज़र नहीं आता,
कश्ती तो बन्धी पड़ी है यहाँ
कोई उसे चलाने नहीं आता।
(इस बस्ती के माँझी सब
न जाने किधर गये होंगे)

शेयर

तेरे जिस्म की ढहती इमारत को देख
मेरे अन्दर से कुछ ईंटें खिसक गईं।

धागे का बन्धन

धागा इक बन्धन है
रस्सी बन जाये तो
मोह का इक रिश्ता है
राखी बन जाये तो
जान ले लेता है
फाँसी बन जाये तो।

लाज यह बनता है
शरीर ढक जाये तो
कफ़न कहलाता है
शव पर चढ़ जाये तो।

आपस में जोड़े यह
सीधा जब चलता है
मुश्किल में डाले यह
गाँठें लग जाएं तो।

भोर का स्वागत

खुशी से गा रहे मधुगान
यह पक्षी
भोर के स्वागत में
उल्लासित हो रहे हैं यह
उस प्रभु की आँख मिचौनी में
अभी रात का अंधियारा था
अब भोर का उजियारा है
इन्तज़ार कर रहे हैं वह
सूरज की किरणें आने का
सूरज भी जैसे धीरे-धीरे
मस्ती में चला आता है
हो कर अपने रथ पे सवार
वह और जगाने आता है
उसके आते ही सब पक्षी
चहक-चहक से जाते हैं
फूल भी अपनी निद्रा छोड़
महक-महक से जाते हैं
सूरज यह सब गर्वित हो
आगे बढ़ता जाता है
अपनी तेजोमयी किरणों से
धरती को चमकाता है।

चन्द लाइनें संगीत पर

संगीत तो खुशबू रूह की है
कण्ठ उसे क्या साधेगा
यह तो आवाज़ ख़ुदा की है
हाथ उसे या बाँधेगा।

हाथ और कण्ठ तो
यन्त्र हैं बस
कठपुतली जो बन जाते हैं
अनाहत को आहत में बदल
कानों तक पहुँचाते हैं।

संगीत तो सुर में ढलना है,
वो मस्ती में मचलना है,
कल्पना की डोर पर चढ़ना है
फिर खुले आकाश में उड़ना है।

आसमान पे चाँद अकेला

भोर हो गयी
पर चाँद है
नितान्त अकेला
आसमान में
अभी तलक,
जैसे भिक्षु सा
या सन्यासी हो
या फिर प्रेमी सा
न जाने किसे
ढूँढ रहा वो ?

शायद भटक गया
राह अपनी से
या दिन में
दुनिया देख रहा
या तारों से
रूठा वो
धरती के
तारौं से कहीं
आँख मिचौनी
खेल रहा

मुझे तो वो
लगा छोटा सा
राह भटका सा

नितान्त अकेला
उदासी के आलम में
हौले हौले
आहें भरता
जैसे –
मेला ख़त्म
हो जाने पर
रूठ कर कहीं
छूट गया हो
और तारों की
भीड़ से मिलने को
तरस रहा हो।

जी चाहा,
उसे ले चलूँ
आसमाँ के
उस छोर पर
जहाँ तारों का
वास हुआ हो।

सोच रही थी –
मिलन वो कैसा
होगा तब – ?
चंदा तारे
मुस्काएँगे
ज़ोर ज़ोर से
चिल्लाएँगे,
ऊँचे ऊँचे
हँस पाएँगे,
खुशी में

पागल हो जाएँगे।
उन्हें खुशी में
देख देख कर
मस्ती में मैं
झूम उठूँगी।
मिलन की उस
प्यारी बेला में
सुध-बुध खो कर
नाच उठूँगी।

जीवन-मरन का पुल

मौत का अहसास
इतना सुखद होगा
यह मालूम न था,
ज़िन्दगी से लगाव
इस कदर छुट जाएगा
यह मालूम न था,
पता होता इस बात का
पहले अगर,
तो जीवन-मरन के
इस पुल को
कभी का पार कर लेती।

श्मशान की धूल

श्मशान की मिट्टी ने
धुल बन कर उड़ जाना है,
पता नहीं कौन से खेतों में
जा कर फिर मिल जाना है।

जब कपड़ों पर
पड़ी धूल
श्मशान की,
तो अन्दर तक
काँप गई मैं !

पर फिर,
ऐसा लगा -
मुझे भी तो इसी धूल में
मिल जाना है;
पता नहीं क्यों
इस धूल-संग
इक अपनापन
महसूस हुआ !

मिट्टी को सिर्फ
मिट्टी दिखती,
चलती-फिरती,
नाचती-गाती।

शिथिल पड़
जाने पर जब
लगता वो तो
मर गई है।

जब कि –
यह रूह का
खेल है सब।
रूह आती है,
रूह जाती है
रुह मिट्टी का
अवरय डाल
हर आँख को
भरमाती है।

आज एक और जिस्म
लाश में बद्ल गया है
आज एक और माँग कइ सिन्दूर
उजड़ गया है।

हम चलती-फिरती रूहें
श्मशान की धूल ही तो हैं
या रूहों के चौगिर्द की मिट्टी !

श्मशान की मिट्टी

वो श्मशान की मिट्टी थी
रूह ने आ उसमें डेरा डाला,
मिट्टी के इस पुतले को उसने
जैसा चाहा नाच नचाया।

जब उस रूह को मिट्टी के अन्दर
दम घुटता हुआ नज़र था आया
तब फिर कोई बहाना घड़ कर
उस मिट्टी से पिंड छुड़ाया।

सुबकते साये

जीवन के कितने बन्धन
बँध जाते हैं अनजाने ही,
पर मरण क्षण में चुपके से
ले जाता है कोई कहीं,
बस रह जाते हैं इन रिश्तों के
सुबक रहे चन्द साये ही।

हम कहकहा लगाना भूल गये

आँखों में इक सूनापन
होठों पर इक सिकुड़न सी,
आँखें बुझी बुझी सी हैन,
हम मुस्काना ही भूल गये,
कहकहा लगाना भूल गये।

कहकहों की दुनियाँ और ही थी,
लोग हँसते थे हँसाते थे,
दे लेते थे ले लेते थे,
दिल खोल के हम जी लेते थे।

खुले गगन की छाँव तले,
खेतों और खलिहानों में,
कोई ऊँचे सुर में गाता था,
कोई मस्ती में मुस्काता था।

आज बन्द घरों की दुनियाँ में
सब अपना जीवन ढोते हैं,
हम मुस्काना ही भूल गये,
कहकहा लगाना भूल गये।

शायर का दिल

अपने दिल से
इक दिन मैंने
कुछ पूछा था
बस ऐसे ही --

तू कैसे चलता रहता है
बिना थके ही
पलपल हरपल ?

तेरे निरन्तर चलने पर ही
निर्भर करता सबका जीवन
लगता यूँ है, दिल ही दिल है,
दिल जो नहीं तो कुछ भी नहीं है।

पर --
दिल मेरे तू जैसा भी है
शायर का दिल, वैसा नहीं है।
मैं जानूँ -- कि
हर शायर के दिल का रंग
शायद अपना-अपना ही है।
किसी का दिल उसकी महबूबा
की आँखों में बसा हुआ है
और किसी पायल के घुंघरु
की झंकार में फंसा हुआ है।
या शायद पनघट से पानी

लाती किसी मटकी में होगा,
हो सकता है या फिर काले
काजल की रेखा में होगा।
या अधरों के कोने में
छिपी हुई मुस्कान में होगा
या बिन्दिया के गोल-गोल से
घेरे में रह गया वो होगा।

फिर सोचूँ -- कि
पता नहीं कब माँ की गोद में
जा बैठा उसका वो दिल
या बहना की राखी में ही
बँध कर रह गया वो होगा।

कभी-कभी तो मिट जाता है
देश की खातिर उसका दिल
और कभी तो मज़हब की
दीवार फाँद आ जाता वो
और नहीं तो दिल ही दिल में
फाँसी पर चढ़ जाता वो।

मैं जानँ -- कि
शायर का दिल कभी-कभी तो
आँख का आँसू बन जाता है
कभी सुहागन के माथे और
माँग में जैसे ढल जाता है,
कभी पसीने की बूँदें बन
खेतों में ही मिल जाता है
और कभी रोते बच्चे की
आहों में वो बस जाता है।

फिर सोचूँ कि -
कभी तोप के गोले की
गर्जन बन जाता है वो
और कभी मरने वालों की
खून की धार में मिल जाता है।
कभी कुम्हार की माटी बनता
कभी हाथों के छाले भी
कभी भंवरे की गुन-गुन भी

क्या जनूँ मैं --
शायर का दिल क्या क्या बनता
कहाँ कहाँ वो भटका करता

पर--
अपने अन्दर धड़क रहे
उस दिल को कैसे समझाऊँ
कि तेरी धड़कन के कारण
यह जिसम है ज़िंदा मान लिया
पर शायर के दिल के कारण
यह रूह ज़िंदा है मान भी ले।

चुनरी

ओढ़ी तो चुनरी
बड़ी सुन्दर लगी,
हवा में उड़ी,
लहराने लगी।

तारों से सजी
कभी आँचल बनी,
ममता से भरी
कभी छाया बनी,
दुल्हन जब सजी
तो यह घूंघट बनी,
फूलों से सजी
पूजा को चली,
घर की चाबी सो बाँधे
वो पल्लू बनी;
वो लाल, कभी पीली,
कभी नीली बनी,
कभी अदा है बनी,
कभी हया है बनी।

कभी मुँह से गिरी,
कभी मुँह पर पड़ी,
कभी फूलों भरी
कभी काँटों भरी,
कभी सोने भरी

कभी पैबन्द भरी,
कभी तारों भरी
कभी मोतिओं भरी,
काश चुनरी न होती
कभी आँसुओं भरी !

यादों के झरोखे

यादों के झरोखों से
चन्द चेहरे नज़र आये
कुछ बातें हुईं उनसे
चन्द प्रश्न उभर आये।

यादों के झरोखों की
सीमा जो नहीं होती
उन चेहरों को छू लूँ मैं
ऐसा कभी हो पाये।

यादों के झरोखों से
चन्द आहें भी उठती हैं
उन आहों को सुनते ही
दो आँसू यलक आये।

यादों के झरोखों से
दो हाथ उभरते हैं
आसीस वो देते हुए
दिल में ही उतर आये।

यादों के झरोखों से
दो पलकें हैं भीगी हुईं
मिलने को तरसती हुईं
बोझिल सी वो हो जायें।

यादों के झरोखों से
कहकहे भी उठते हैं
काश कभी उनमें
आवाज़ उभर आये।

यादों के झरोखों की
धुंधली सी वो यादें हैं
हर अक्श जो उभरे तो
वो भी धुंधला हो जाये।

झरोखे तो झरोखे हैं
बस बात ही ऐसी है
मैं इधर ही रह जाऊँ
वो उधर ही खो जाएँ।

यादों के झरोखों से
चन्द चेहरे नज़र आये
कुछ बातें हुईं उनसे
चन्द प्रश्न उभर आये।